ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 226-230**
ISSN NO.- 2347 – 2944 (Print)
e-ISSN NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

भारतीय पुनर्जागरण एवं राजा राममोहन राय का योगदान

1. प्रज्ञा मित्तल
2. प्रो. चिन्मय कुलश्रेष्ठ

1. शोध अध्येत्री, 2. शोध निर्देशिक, आधुनिक भारतीय इतिहास विभाग, संगम विश्वविद्यालय, भीलवाड़ा (राजस्थान), भारत

Received-18.03.2025, Revised-23.03.2025 Accepted-30.03.2025 E-mail : mittalpragya06@gmail.com

सारांशः सारांशः नवीन भारत के निर्माता राजाराम मोहन राय ने भारत को एक नई दिशा दी। श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने उनके सम्बन्ध में कहा था कि, "राजाराम मोहन राय ने हमे आधुनिकता की राह दिखाई। उनकी प्रतिमा में रचनात्मक सजीवता होने के कारण उन्होंने अतीत एवं समकालीन दोनों संस्कृति के सर्वोत्तम गुणों को आत्मसात किया था.....।" राजाराम मोहन राय का दर्शन पूरा शून्यवादी नहीं था बल्कि व्यवहारिकता का कूट लिए हुए था। उनका चिन्तन आज भी सर्वमान्य है। सन् 1821 में उनके द्वारा संवाद कौमुदी पत्रिका के द्वारा वर्षों से लुप्त राजनैतिक चिंतन को एक नई दिशा प्रदान की जिससे भारतीयों ने अपनी राजनैतिक अधिकारों की माँग की। 1828 में उनके द्वारा स्थापित ब्रह्म समाज के विचार केवल बंगाल तक ही नहीं बल्कि भारत के सुदूर क्षेत्रों तक फैल गये। जिसके द्वारा उदारतावाद, तर्कवाद और आधुनकिता का वातावरण तैयार किया गया। निःसंदेह वे पक्के एकेश्वरवादी थे, हिन्दू धर्म ग्रन्थों के ब्रह्मज्ञान और इस्लाम के एकेश्वरवाद ने उनके विचार को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण रूप से भाग लिया था।

सन् 1829 में सती प्रथा को निषिद्ध घोषित कर दिया गया। इस सम्बन्ध में उन्होंने यह प्रमाणित किया कि सती प्रथा धर्म संगत नहीं था। उन्होंने नारी स्वतंत्रता, नारी अधिकार, नारी शिक्षा, विधवा पुनर्विवाह, अर्न्तजातीय विवाह आदि सभी हिन्दू समाज में मान्य होने पर बल दिया। सन् 1815 में जिस आत्मीय सभा की स्थापना की उनमें धर्म के साथ सामाजिक समस्याओं की आलोचना की जाती थी। यही कारण था कि उन्हें सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने भारत के "संवैधानिक आन्दोलन का जनक" तक कहा था। राजाराम मोहन राय अपनी पूर्ण शक्ति एवं विविध उपायों से अपने देशवासियों में आत्म–स्वाभिमान भरने की कोशिश किये थे। पाश्चात्य शिक्षा पद्धति के पक्षपाती होने पर भी वे भारतीय संस्कृति और इसके गौरव ग्रंथों के अध्ययन–अध्यापन के प्रति पूर्णतः सजग थे। इसी उद्देश्य के लिए उन्होंने वेदान्त कॉलेज की स्थापना की थी।

कुंजीभूत शब्द– समावेशी शिक्षा, कौशल विकास, सहायक प्रौद्योगिकी, डिजिटल समावेशन, गेमिफाइड शिक्षा, उपकरण

प्रस्तावना – राजाराम मोहन राय (1792–1883) उस वैचारिक क्रान्ति के सृष्टा थे जिससे आधुनिक भारत का जन्म हुआ। वे मानवतावाद के प्रतिपूर्ति थे। विश्व मातृत्व के उपासक थे। और धार्मिक मत व मतान्तरों से ऊपर उठकर सार्वभौम धर्म के चिंतक थे। वास्तव में राजाराम मोहन राय सम्पूर्ण मानवजाति के आध्यात्मिक और एक विश्व व्यापी धर्म के स्वप्नदृष्टा थे। राजाराम मोहन राय मानव सेवा की विवेकपूर्ण भावना के साथ सभी पुर्नजागरण और धार्मिक सुधार एक साथ लाने में सहायक हुए वे पहले बौद्धिक व सांस्कृतिक जीवन के प्रत्येक पहलू को स्पर्श किया और उसके स्वरूप को बदला और उनका दूसरा प्रभाव दूरगामी था, जैसे यूरोप में धार्मिक सुधारों के प्रति मार्टिन लूथर का था। "यदि पश्चिमी देशों में मार्टिन लूथर का कार्य ईसाईयों द्वारा स्मरणीय है तो राजाराम मोहन राय के भागीरथ प्रयत्न उन्हें निश्चय ही हिन्दू जाति के हितकर्ताओं के ऊँचे पद पर प्रतिष्ठित करेंगे।" भारतीय पुनर्जागरण के प्रथम चरण के लोगों ने भारतीय तत्वों को त्याग दिया और उन तत्वों को आत्मसात करना प्रारंभ किया जिन्हें पश्चिमी सभ्यता के लोग अच्छा मानते थे। ऐसा प्रतीत होता था कि रंग व वर्ण से ही लोग सिर्फ भारतीय हैं शेष सभी बातों से यूरोपीय बन रहे थे। इसे प्रगतिशील समुदाय की संज्ञा दी गई। इस समुदाय द्वारा भारतीय मूल तत्वों को छोड़कर यूरोपीय जीवन आदर्श व मार्क्सवादी सिद्धांत को अपना लिया गया और भारत को उस मार्ग पर ले जाने का प्रयास किया जो हमारी संस्कृति के पूर्णतः प्रतिकूल थी। ऐसी स्थिति ने एक दृढ़ प्रतिक्रिया को जन्म दिया। परिणाम स्वरुप पुनर्जागरण की एक नवीन भावना का प्रादुर्भाव हुआ, और उस प्रत्येक वस्तु का स्वागत किया गया जिसमें भूतकाल का सुगंध व रस होता था। यह हृदय से उनका पक्षपाती था जो प्राचीनतम तत्वों को अंगीकार करते थे। उन दोनों के मध्य एक नवीन आंदोलन प्रगट हुआ जिसका नेतृत्व राजा राममोहन राय द्वारा किया गया। इस समुदाय द्वारा यूरोपीय सर्वश्रेष्ठ स्थाई तत्वों को भारतीय संस्कृति के साथ एकीकरण का प्रयास किया। 20वीं सदी के आरम्भ में एक नवीन आंदोलन का प्रारंभ हुआ जिसके प्रणेता श्री अरविंद थे। उनके अनुसार भारतीय पुनर्जागरण भारत की आत्मा की शक्ति की नवीन देह में पुनर्जन्म था। इस आंदोलन ने संपूर्ण बहुमुखी आध्यात्मिकता में वह चाबी प्राप्त कर ली जिससे केवल अतीत के कोष को ही नहीं खोज जा सके अपितु पूर्व व पश्चिम दोनों के ही वास्तविक मूल्यांकन के आधार पर वर्तमान का निरूपण किया जा सके। भारतीय अपने वातावरण से अकर्मण्य अंधविश्वासी परंपरावादी और भाग्यवादी बन गए थे। पुनर्जागरण ने इनमें उपस्थित इन दोषों को वैज्ञानिक व तर्कपूर्ण सिद्धांतों की सहायता से समाप्त करने का प्रयास किया जिसमें की अधिकांश सफल हुए अब लोगों में तर्कशीलता का विचार प्रारंभ हुआ और ये वैज्ञानिक तक की कसौटी पर धर्म व समाज संबंधी विचारो, प्रयासो एवं सिद्धांतों को जाँचना व परखना प्रारंभ कर दिया।

हिंदू धर्म का पुनरुत्थान– भारत में अंग्रेजों के शासन के पूर्व जो सत्ता थी उसमें हिंदू धर्म का पतन निरंतरता के साथ हुआ यद्यपि कुछ अपवादों को छोड़ दे तो। इसका परिणाम यह हुआ कि हमारे जो नवयुवक थे उन्हें हिंदू धर्म की आंतरिक मूलभूत भावना की शिक्षा नहीं प्रदान की गई। जिस करण उन्हें हिंदू धर्म में घृणा, अविवेक, अप्रियता के सिवा कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ। फलस्वरुप 1857 के विद्रोह के पूर्व कृष्णमोहन बनर्जी, लाल बिहारी डे, कवियित्री तोरूदत्त के पिता गोविंद दत्त ने ईसाई धर्म स्वीकार किया परंतु इस प्रवृत्ति का अंत उस धार्मिक आंदोलन द्वारा किया गया जिसका उद्देश्य भारत में धार्मिक और सामाजिक जीवन में प्राण फूँकना था।

भारत में धार्मिक आंदोलन के कारण हिंदू धर्म की स्वाभाविक शक्ति अपने दिव्य व महान रूप में प्रकट होने लगी। पुर्नजीवित हिंदू धर्म अपनी प्रतिरक्षा में लगा रहा। इस साहसपूर्ण कूच द्वारा यह शत्रु के खेमे में शामिल हो गया तथा मानवों को सभ्य बनाने वाले प्रभावशाली धर्म के रूप में भी अन्य धर्म के साथ जीवित रहने का दावा डंके की चोट पर करने लगा। यह नवीन हिंदुत्व व हिंदू धर्म पुनरुत्थान के प्रथम चरण का फल था।

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

इस धार्मिक आंदोलनो के परिणामस्वरुप अनेक समाज सुधारक, शिक्षक, संत व विद्वानों का उत्कर्ष हुआ। इनके द्वारा उत्तर काल में से प्रविष्ट हुए खराब तत्वों को पृथक करके प्राचीन शक्तियों को तर्क व वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रमाणित किया। इसका संदेश वे यूरोप व अमेरिका तक ले गए। इन्होंने हिंदू धर्म और इसके दर्शन को भारतीय जाति प्रथा पौराणिक गाथाएं धार्मिक क्रिया विधियों व कर्मकाण्ड से स्वतंत्र रखकर उसकी व्याख्या की। इससे लोगों में यह संदेश पहुंचा कि हिंदू धर्म जैसा पहले था उतना ही आज भी सशक्त है। अब ऐसा कोई भय नहीं कि हिंदू धर्म, ईसाई धर्म या पश्चिम में सभ्यता से पराजित होकर दब जाएगा। जिस प्रकार मध्य युग में मुसलमान के दमन से और प्राचीन काल में बौद्ध धर्म के पृथकत्व से हिंदू धर्म बचकर जीवित रहा उसी प्रकार इस आधुनिक युग में भी ईसाइयों के धर्मांतरण के बावजूद भी जीवित रहा।

सामाजिक सुधार– ब्रह्म समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन जैसे धार्मिक आंदोलन एवं महात्मा गांधी जैसे नेताओं के प्रयास व उनके दर्शन से भारतीय सामाजिक व्यवस्था में महान परिवर्तन हुए। इन्होंने हिंदू समाज में महान हलचल उत्पन्न कर दी। आधुनिक पुनर्जागरण का विशाल अंग सामाजिक सुधार है। वस्तुतः नवोत्थान के आंदोलन का सूत्रपात सामाजिक व धार्मिक सुधारो से ही हुआ। फलतः सती प्रथा और शिशु हत्या अतीत की अविश्वसनीय बात हो गयी।

स्त्रियों को स्वतंत्रता के साथ शिक्षा दी जा रही है बाल विवाह गैर कानूनी हो गए हैं विधवा विवाह संभव हो गया, बहु विवाह दुर्लभ हो चुकी है। विदेश यात्रा अब साधारण बात हो गई। जाति व्यवस्था में सरलता का आगमन हो चुका है। इस प्रकार पुनरूत्थान ने इस एहिक जीवन और समाज के सुख वैभव की ओर अधिक ध्यान देने के लिए भारत को बाध्य किया।

भारतीय इतिहास की पुनः प्राप्ति– पुनरुत्थान ने भारत की हिंदू महानता को पुनर्जीवित व सुदृढ़ ही नहीं किया अपितु तो भारतीय इतिहास की गौरव में दिव्य गाथाओं को प्रकाश में लाने का सफल प्रयास किया। फर्ग्यूसन, बुलर, फ्लीट, हैवेल, पर्सी ब्राउन, मार्शल एवं आनंद कुमार जैसे पुरातत्ववेत्ताओं मुद्रा व शिलालेख विशेषज्ञों और कला मर्मज्ञों ने हमारे प्राचीन स्मारकों का यश गौरव प्रकट किया और हमें हमारे अतीत पर गर्व करना सिखाया।

जदुनाथ सरकार, भंडारकर, हर प्रसाद, महादेव, गोविंद रानाडे, राजवाडे, सरदेसाई, मैकडॉनल्ड, रेप्सन, स्मिथ, टॉड आदि जैसे इतिहासकारों ने हमारे राष्ट्रीय गर्व को ही प्रोत्साहित नहीं किया अपितु भारत की महानता के प्राचीन इतिहास के निरूपण का मार्ग भी सुलभ कर दिया।

पुनरुत्थान के कारण हम अपने प्राचीन वैदिक एवं बौद्ध साहित्य को पुनः प्राप्त करने में समर्थ हो सके। वेद और उनकी टिकाएं आर्यावर्त के मैदान से लगभग लुप्तप्राय ही हो गई थी। इससे भी बड़े दुर्भाग्य की बात यह थी कि यहां किसी के पास भी मूल रूप में इसकी प्रति नहीं थी। इस प्रकार बौद्ध साहित्य भी विस्मृत हो चुके थे। बौद्ध धर्म पाली व संस्कृति के साहित्य को लोग उपेक्षा की दृष्टि से देखते थे। परंतु वे अंग्रेज ही थे जिसने इन साहित्य को छपवाकर प्रकाशित किया।

यूरोपीय विद्वानों ने संस्कृत का अध्ययन कर भारतीयों की आंखें उस ज्ञान भंडार की ओर खोल दी जिसे उनके पूर्वज छोड़ गए थे सर चार्ल्स विल्किंस, सर विलियम्स जोंन, कोलब्रुक, विल्सन, मयूर, मैक्समूलर जैसे यूरोपीय विद्वानों ने संस्कृत के आधुनिक अध्ययन को प्रोत्साहित किया। विलकिंस द्वारा गीता अनुवाद, जोन्स द्वारा मनुस्मृति, शकुंतला आदि नाटक का अनुवाद किया गया। कोलब्रुक ने पाणिनी का व्याकरण, हितोपदेश जैसे अनेक संस्कृत नाटक का संकलन किया मैक्समूलर की प्रेरणा से भारत में अनेक धर्म शास्त्रों का अनुवाद कर उन्हें प्रकाशित किया गया तथा पश्चिम में इसका अध्ययन किया जाने लगा इन सब बातों से हमें प्राचीन बहुमूल्य ग्रन्थों की पुनः प्राप्ति हुई और हमारी राष्ट्रीय भावना को अधिक प्रेरणा व उत्तेजना मिली।

भारत की देशी भाषाओं का साहित्य का विकास–यदि प्रथम नवोत्थान का एक महत्वपूर्ण अंग प्रतिभावान व्यक्तियों का उत्कर्ष था तो दूसरा भारत की देसी भाषा का विलक्षण विकास जिसमें बंगाल अग्रणी रहा। राजा राममोहन राय, रविंद्र नाथ टैगोर, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, मधुसूदन दास आदि बंगाल से ही थे। रविंद्र नाथ टैगोर जैसे साहित्य व संस्कृति के सभी अंगों गद्य, पद्य, नाटक, उपन्यास, निबंध, संगीत, चित्रकला आदि को अपनी देन दी है। इसका प्रभाव इतना विस्तृत वह गहन हो गया था कि आन्ध्रा, गुजरात, महाराष्ट्र व हिंदी के साहित्य की नवीन भावनाएं व प्रवृत्तियां न्यूनाधिक रूप से इनसे ही उत्पन्न हुई हैं।

उर्दू–फारसी के मोहम्मद इकबाल, हिंदी के प्रेमचंद और बंगाल के शरद चंद्र चटर्जी भारतीय साहित्य के अन्य महान व्यक्ति हुए हैं इन्होंने एक नवीन शैली की रचना की और गद्य क्षेत्र में विषयों को धर्मनिरपेक्ष बना दिया। पुनर्जागरण के परिणाम स्वरूप अब देशी भाषा साहित्य में तीन पीढ़ियों का प्रादुर्भाव हुआ। प्रथम पीढ़ी, पाश्चात्य शिक्षा के कारण एक ऐसे वर्ग का जन्म हुआ जिन्होंने यूरोप के दर्शन, साहित्य व विज्ञान को ग्रहण कर लिया और इसका प्रयोग इन्होंने अंग्रेजी भाषा की पुस्तकों का अपने–अपने भाषा में अनुवाद कर देशवासियों के हित का सम्मान किया। इसमें कृष्ण मोहन बनर्जी, राजेंद्र लाल मित्र, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, हिंदी के लल्लू लाल इसी प्रथम पीढ़ी के है।दूसरी पीढ़ी ने देश काल की एक नवीन व्यवस्था को साहित्य में प्रकट करने की चेष्टा की। इस पीढ़ी का प्रत्येक साहित्य अपने–अपने क्षेत्र का विशेषज्ञ था। इस काल के साहित्यकारों द्वारा यूरोपीय शैली को भारतीय आवश्यकता के अनुरूप अपना लिया गया। यूरोपीय प्रभाव अधिक था परंतु इनके द्वारा भारतीय प्राचीन साहित्य में जो कुछ भी श्रेष्ठ था उन सबसे अपना संबंध बनाए रखा। इनमें मधुसूदन दत्त, बंकिम चंद्र चटर्जी, भारतेंदु हरिश्चंद्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि थे।

तीसरी पीढ़ी, इनमें वे साहित्यकार थे जिन्होंने साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में मौलिक साहित्य की रचना की है। जिनका प्रभुत्व आज भी विद्यमान है। आधुनिक भाषा की शिक्षा के पूर्व कतिपय देसी भाषा इतनी कम विकसित थी कि उनके द्वारा आधुनिक विचारों को व्यक्त करना मुश्किल कार्य था। पूर्व में देसी भाषाएं केवल धार्मिक विषयों का ही वर्णन करती थी। गद्य का अस्तित्व ना के बराबर था सभी विचार कविता, गीत भजनों द्वारा प्रचारित होती थी।

सारपूर्ण कथनों, विचारों तथा व्यापारिक पत्र का व्यवहार के अतिरिक्त सभी बातों की अभिव्यक्ति पत्रात्मक रूप से ही होती थी। पुनर्जागरण के परिणाम स्वरुप हमारी भाषा सरल व कठिन दोनों हो गई थी। पुनर्जागरण के प्रारंभ में जब बाईबिल का अनुवाद अंग्रेजी भाषा व देसी भाषा में किया गया तो उनमें गद्य शैली का उपयोग किया गया। मुद्रणालय की स्थापना, भारतीय समाचार पत्र तथा पाश्चात्य साहित्य के अध्ययन ने नवीन शैली के विकास में काफी योगदान दिया। यूरोपीय प्रभाव ने साहित्य में देशभक्ति की भावना प्रज्वलित कर दी और हमारे अतीत के इतिहासकार के प्रति श्रद्धा व भक्ति उत्पन्न कर दी। हिंदी, गुजराती, मराठी, उर्दू तथा दक्षिण की बड़ी–बड़ी द्रविड भाषाएं तेलुगू, तमिल, मलयालम व कन्नड सभी में महत्वशाली विकास हुआ। फलस्वरुप हमारे श्रेष्ठ साहित्य को अतर्राष्ट्रीय सम्मान की ख्याति प्राप्त हो गई एवं विश्वव्यापी अभिरुचि उत्पन्न हुई।

अनुसंधान की वैज्ञानिक भावना का विकास– अनुसंधान की वैज्ञानिक भावना पुनर्जागरण के एक विलक्षण अंग के रूप में अभिव्यक्ति है। 1784 ई० में बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना के पश्चात बहुसंख्यक यूरोपीय और भारतीय विद्वानों ने अध्ययन एवं अनुसंधान की इस शाखा के लिए स्वयं को समर्पित किया एवं परिश्रम किया जिसका परिणाम आश्चर्यजनक हुआ। विज्ञान व दर्शन के अध्ययन में भी असाधारण वृद्धि हुई। आधुनिक विज्ञान की उन्नति में भारत का भी योगदान अतुलनीय है। गणितशास्त्र के क्षेत्र में रामानुजम् विज्ञान क्षेत्र में जगदीश चंद्र बसु की नवीन विज्ञान क्षेत्र में भारत की सच्ची देन है। भौतिक व रसायन शास्त्र में विश्व ख्याति प्राप्त करने वालों में भारतीय भी शामिल है। सर सी०वी० रमण और डॉक्टर मेघनाथ साहा ने भौतिकी में अपना योगदान दिया। पी०सी० राय, जे०सी० बोस तथा एस०एस० भटनागर ने रसायन क्षेत्र में विश्व ख्याति अर्जित की। ज्योतिष के क्षेत्र में एस चंद्रशेखर काफी प्रसिद्ध व्यक्ति है बी०एन० सान्याल व डॉक्टर राधाकृष्णन जैसे शिक्षकों तथा अन्य लोगों की प्रेरणा से दर्शनशास्त्र के अध्ययन की ओर ध्यान दिया जाने लगा। डॉ0 राधाकृष्णन ने जिस अनूठे ढंग से भारत के धार्मिक और सांस्कृतिक विचारों का प्रतिपादन किया है। उनके इन सब कार्यों ने भारत को विश्व की दृष्टि में बहुत ऊंचा उठा दिया है।

राजा राम मोहन राय व उनका योगदान–भारतीय पुनर्जागरण के पिता राजा राममोहन राय का जन्म हुगली (बंगाल) जिले के दक्षिण में स्थित राधापुर नामक ग्राम में 1772 ई0 को हुआ। कुछ विद्वान इनका जन्म वर्ष 1774 ई0 मानते है। राजा राममोहन राय बन्धोपध्याय वंशीय सुराई के राठीय ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम रमाकांत एवं माता का नाम तारिकी देवी था।

इनका परिवार परम्परावादी विचारों को मानने वाला था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा गांव के एक मदरसें से हुई। वे विलक्षण प्रतिभा के धनी थे जिस कारण इनके पिता ने संस्कृत व फारसी की शिक्षा के लिए पटना भेज दिया।

इनकी माता शाक्त धर्म को मानने वाली थी। राजा राममोहन के ऊपर इनका काफी प्रभाव पडा परन्तु जब इन्होंने मूर्ति पूजा एवं बहुदेववाद सहित अतार्किक कर्मकाण्डों की आलोचना की तो स्वयं माता ने ही जायदाद से बेदखल कर दिया।

इस्लाम एवं एकेश्वरवाद का इन पर काफी प्रभाव पडा। शिक्षा के दौरान उदारवादी मौलाना एवं पादरियों के सम्पर्क में आए। ये ईसाई विचारो से प्रभावित थे। मैक्समूलर ने इन्हें पूर्व–पश्चिम सभ्यता का मेल कराने वाला व्यक्ति बताया है। ईसाई विचारों की तरफ इनके झुकाव को देखते हुए पादरियों द्वारा 1824 ई0 में एकेश्वरवाद की नई शाखा स्थापित की तथा इन्हें आमंत्रित किया। परन्तु इनके द्वारा मना कर दिया गया। साथ ही इन्होंने यह स्पष्ट किया कि मैंने सभी ग्रन्थों का अध्ययन मानवता के कल्याण लिए किया था। जिससे मिशनरीयों को काफी धक्का लगा।

हिन्दू धर्म की मूर्तिपूजा का इनके द्वारा तर्कपूर्ण विरोध किया गया। हिन्दू धर्म के विद्वानों की आलोचना से परिवार में कटुतापूर्ण सम्बन्ध हो गए। परन्तु इन्होंने हार न मानते हुए अपने उद्देश्यों के प्रति दृढता से आगे बढ़े और ब्रह्म समाज के रूप में एक ऐसे संस्था की स्थापना की जिसने हिन्दू धर्म के पुनरूत्थान के तर्क पूर्ण वातावरण की नींव तैयार की।

धार्मिक विचार व ब्रह्म समाज– अरबो के आक्रमण से ही भारत की धार्मिक पतन प्रारम्भ हो चुका था। भारत वैदिक ज्ञान से हटकर पौराणिक ज्ञान की तरफ बढ़ा साथ ही कट्टर कर्मकाण्ड की तरफ अग्रसर हुआ। सम्पूर्ण भारत वैज्ञानिक मार्ग से हटकर मतवाद में ऐसा उलझा की स्वयं भी मोक्ष का मार्ग ही भूल गया। आत्म ज्ञान की जगह माया में फंसकर तमाम पंथो में विभाजित होना प्रारम्भ हो गया। तीर्थ, व्रत, श्राद्ध, ब्रह्मभोज आदि कर्मकाण्डों में कट्टरता को बढावा दिया गया। अहिंसा के स्थान पर एक हिंसक धर्म का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। वैदिक बौद्धिक ज्ञान का शनैः शनैः लोप प्रारम्भ हो गया। ज्ञानीजन भी मतवाद की ओर बढ़े। पंडा, पुजारी, आदि धर्म के मुखिया स्वयं को धर्म का सर्वेक्षण समझने लगे थे। तीर्थ, मन्दिर आदि पर स्वयं का एकाधिकार बताने लगे। इससे पाखण्डवाद को बढ़ावा मिला और शूद्रो के शोषण का सिलसिला प्रारम्भ हुआ। क्योंकि धार्मिक कट्टरता को कोई ऐसा चाहिए था जो उसके गलत को सही ठहराए। जिससे ग्रस्त होकर भारतीय जनमानस का एक बडा तबका ईसाई एवं इस्लाम पंथ को स्वीकार करने को मजबूर हुआ।

राजा राममोहन की धर्म की पहली पुस्तक तुहफत–उल–मुहादिन (एकेश्वरवादियो का उपहार) थी जो कि 1804 ई0 में फारसी भाषा में प्रकाशित हुई। यद्यपि इसका परिचय अरबी भाषा में है।

राजा राममोहन राय बचपन से ही इस परिस्थिति से रूबरू थे। मूर्तिपूजा, कर्मकाण्डों को लेकर पिता से हमेशा मनमुटाव था। राजा राममोहन राय की सोच एक तार्किक एवं वैज्ञानिक दर्शन पर आधारित थी। उन्होंने प्रत्येक धर्म को तर्क से समझने का प्रयास किया और उसमें जो विश्वकल्याण का था उसका समर्थन भी किया। राममोहन राय का पहला प्रयास यह था कि हिन्दू धर्म को पुनः उसके मूल सिद्धान्त पर किस प्रकार लाया जाए। इनका विचार था कि यदि नीव पक्की नहीं है तो इमारत चाहे जितनी भी मजबूत क्यों ना हो वह कभी भी ढह सकती है।

ब्रह्म समाज की स्थापना के पहले 1815 ई0 में स्थापित आत्मीय सभा की स्थापना की थी। 1821 ई० में यूनीटेरियन कमेटी की स्थापना होती है। परन्तु यह ईसाई, धर्मातरण को रोकने में असफल थी। इधर राजा राममोहन पर यह नैतिक दबाव था कि इसे कैसे रोका जाए। अपने साथियों से विचार–विमर्श के उपरान्त इनके द्वारा एक ऐसी पद्धति शुरू करने की पहल की गई जिसमें एकेश्वरवाद, ब्रह्म, उपनिषद, तर्कपूर्ण कर्मकाण्ड की उपासना की जा सकें। वे अधिकतर चर्चों में जाते थे जो कि इनके साथियों को पसन्द नहीं था। इनके द्वारा इन्हें यह सुझाव दिया गया कि हमें अपना एक पूजा स्थल बनाना चाहिए यह बात राममोहन राय को भा गई। पीयूष दास कांति के अनुसार "ब्रह्म समाज का मूल मंत्र भी यही था।"

राजा राममोहन राय ने अपने निकटतम सहयोगी द्वारिका नाथ टैगोर, रामकलिनाथ, मुंशी प्रसन्न कुमार ठाकुर, मथुरानाथ मलिक आदि के साथ परामर्श करने के पश्चात चितपुर रोड स्थित फिरंगी वसु के मकान में 20 अगस्त 1828 ई० को ब्रह्म समाज की स्थापना की गई। पहले इसका नाम ब्रह्म सभा था परन्तु कालान्तर में यह ब्रह्म समाज नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह संस्था आत्मीय सभा का ही विकसित रूप था। ताराचन्द्र चक्रवर्ती इसके पहले सचिव बनाए गए। प्रारम्भ में प्रत्येक शनिवार को सुबह 7–9 के मध्य ब्रह्म उपासना होती थी। इस संस्था में पहला धार्मिक उपदेश रामचन्द्र वागीश द्वारा दिया गया जो पूर्णतः एकेश्वरवाद पर आधारित था। ब्रह्म समाज की उद्घाटन दिन बुधवार को हुआ था।

ब्रह्म समाज की सहायता से राजा राममोहन ने समाज में अतार्किक धर्म के खिलाफ एक जाग्रति पैदा की और लोगों को धर्म के व्यवहारिक उपयोगिता को समझाने का प्रयास किया। ब्रह्म समाज द्वारा संवाद कौमुदी (1821) नामक पत्रिका का प्रकाशन भी किया जाता था, जिसमें समाज में व्याप्त कुरीतियों को लोगों से अवगत कराया जाता था। ब्रह्म समाज का वार्षिक उत्सव धूमधाम से मनाया जाता था साथ ही नानक, मीराबाई, कबीर आदि के भजन भी गाए जाते थे। भोज का कार्यक्रम भी होता था। ताकि हिन्दू समाज,

ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

एकजुट रह सके। ब्रह्म समाज के विरोध में कट्टरपंथियों ने 1830 ई0 में धर्म सभा की स्थापना किया जिसका कार्य ठीक ब्रह्म समाज का उल्टा था। खासकर स्त्रियों के स्वतन्त्रता के विषय में सती प्रथा के विरोध को वे पुरुषों के सम्मान का विरोध मानते थे।

ब्रह्म समाज के मूल सिद्धांतः–

1. ब्रह्म समाज मूर्ति पूजा एवं बहुदेववाद में विश्वास नहीं करता हैं।
2. ब्रह्म समाज शाश्वत, अभेद और अपरिवर्तनीय सत्ता की पूजा में विश्वास करता हैं।
3. ब्रह्म समाज रूढ़िवादिता या अंधविश्वास में विश्वास नहीं करता है।
4. ब्रह्म समाज धर्म निरपेक्षता एवं प्रगतिशीलता में विश्वास करता है।
5. ब्रह्म समाजी सभी धर्मो के धर्मग्रन्थ, पैगम्बर और सन्तों पर आस्था रखते है।
6. किसी भी व्यक्ति की भगवान की रूप में पूजा नहीं करते है।
7. इनके अनुसार ईश्वर अनंत और परिपूर्ण, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सर्वदयालु, पवित्र और सर्वशक्तिमान है।

राजा राममोहन राय और उनके राजनीतिक विचार– राजा राममोहन राय लोगों के वैक्तिक स्वतंत्रता एवं राजनीतिक विचारों के प्रबल समर्थक थे। क्योंकि इनका मानना था कि जब तक व्यक्ति सोच व समझ से तार्किक व स्वतन्त्र नहीं होगा तब तक वह किसी भी दशा में उन्नत शिखर पर नहीं पहुंच सकता है। रविन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार "इस महान राजा राममोहन राय का जन्म एक ऐसे समय में हुआ था। जब हमारा वंश अपने अस्तित्व के आन्तरिक सत्य के साथ अपने सम्बन्ध को खोकर परिस्थितियों की शोचनीय दासता से ग्रसित अविवेक के कुचलने वाले भार के नीचे दबा हुआ संघर्ष कर रहा था।"

तत्कालीन भारतीय समाज हर रूप में विकृतियों से लिप्त था क्योंकि गुलामी की जंजीर पर अब ताला लग चुका था जिसे तोड़ने के लिए एक दृढ मार्गदर्शन की आवश्यकता थी जिसे राजा राममोहन राय द्वारा पूरा किया गया।

वे बेन्थम के विचारो से प्रभावित थे। इनका क्षेत्र तो धर्म व समाज था परन्तु वे राजनैतिक विचारो से स्वयं को अलग नहीं रख सके। राजनैतिक जाग्रति ने इन्हें 'नवीन भारत का सन्देशवाहक' बना दिया। इनका कोई राजनीति के प्रति व्यक्तिगत विचार नहीं था जो भी था समाज की परिस्थितियों के अनुसार ही था।

राजा राममोहन राय निरंकुश शासन के विरोधी थे परन्तु व पूर्ण लोकतन्त्र का समर्थन ना करके कानून के समक्ष स्वतन्त्रता के पक्षकार थे। ये फ्रांसीसी क्रान्ति के विचारों से अत्याधिक प्रभावित थे।

इन्होंने प्रेस की स्वतंन्त्रता का प्रबल समर्थन किया जिस कारण इन्हें 'भारतीय प्रेस का अग्रदूत' भी कहा जाता है। इनके अनुसार, प्रेस शासित एवं शासक के मध्य की वह कड़ी है जिसके धागे से दोनों एक दूसरे से जुड़े होते है और अपनी बात को एक–दूसरे तक पहुँचा पाते है। जिसे इनके द्वारा चरितार्थ करके भी दिखाया गया। प्रेस के सहारे ही वे समाज के उन वर्गों तक अपनी पहुँच बना पाए जहाँ प्रेस के बिना शायद और दशकों लग जाते परन्तु प्रेस पर भी ब्रिटिश कम्पनी सरकार द्वारा समय–समय पर प्रतिबन्ध लगाया गया। जिसका विरोध इन्होंने किया। इनके समय कानून व्यवस्था भी जर्जर थी चूंकि अंग्रेजों का शासन मुगलों से स्थापित हो चुका था। जिस कारण अब भारत में हिन्दू मूस्लिम नहीं अपितु श्वेत–अश्वेत की प्रतिस्पर्धा थी। अंग्रेजो की जूरी व्यवस्था में भारतीयों की कोई जगह नहीं थी। यूरोपीय लोगों के लिए एक ही अपराध के लिए भारतीयों से कम सजा मिलती थी। भेदभाव प्रत्यक्ष दिखाई देता था, जिससे राजा राममोहन राय का ह्रदय भी खिन्न था।

1720 ई0 में कम्पनी द्वारा एक न्यायालय की स्थापना की गई परन्तु बाद में इसे समाप्त कर 1773 एक्ट द्वारा एक उच्च्य न्यायालय की स्थापना की गई।

भारतीयों को इसमें किसी प्रकार से भागीदार नहीं बनाया गया। अंग्रेजों के सम्पर्क में आने से वे अपने अधिकारों के प्रति जागृत हुए और जूरी में भागीदारी के लिए लोगों की ओर से 1816 ई0 में एक विरोध पत्र बोर्ड ऑफ डायरेक्टर को भेजा गया। पत्र के जवाब में यह कहा गया कि सुप्रीम कोर्ट के पास देशी जूरी को भर्ती करने का सम्पूर्ण अधिकार है।

05 मई 1826 ई0 को विलियम बिन द्वारा जूरी एक्ट पास किया गया। परन्तु इसका यूरोपीयों द्वारा घोर विरोध किया गया। काफी दबाव के कारण एक्ट के प्रावधानों को यूरोपीयों के पक्ष में करना पड़ा। संवाद कौमुदी में राममोहन राय ने इसका तीव्र आलोचना किया गया। जिसके जवाब में बोर्ड ऑफ डायरेक्टर द्वारा यह कहा गया कि भारतीयों में जूरी सम्भालने की क्षमता नहीं है यदि हम उन्हें अधिकार देते भी है तो वे यूरोपीय कमजोरी को जान जाएंगे जो कि साम्राज्य के लिए घातक है।

इसके जवाब में राजा राममोहन राय ने जवाब दिया कि यदि क्षमता नहीं है तो कलेक्टर आदि जैसे उच्च्य पदों पर भारतीय क्यो आसीन है और बात रही कमजोरी जानने की तो इतने वर्ष से साथ रहने से वो हर भारतीय जानता है।

तमाम पत्राचार के फलस्वरूप 18 जून 1832 ई0 को ग्राण्ट साहब द्वारा 'ईस्ट इण्डिया जस्टिस पीस एण्ड जूरी बिल' पार्लियामेण्ट से पास करवाया और इससे भारतीयों की जूरी व्यवस्था में भागीदारी मिली। यह राजा राममोहन राय की बड़ी सफलताओं में से एक थी।

समाजिक विचार –सन् 1822 ई0 में राजा राममोहन ने कहा कि प्राचीन भारत में स्मृति, पुराण आदि में महिलाओं को सम्पत्ति का अधिकार दिया गया। इन्होंने अपनी पुस्तक मॉडर्न इन्क्रीचमेन्ट ऑन द एनसीऐन्ट राईट ऑफ फीमेल्स (1822 ई0) में अनेक उदाहरणों द्वारा यह बताया है कि स्त्री की पति की मृत्यु के पश्चात उसके सम्पत्ति में पुत्र एवं पत्नी का बराबर अधिकार प्राचीन काल में था। जिसे पूर्व मध्य काल की शुरूआत से ही छीन लिया गया और वे किसी भी प्रकार का सम्बन्धित दावा ना कर सके, सती प्रथा की शुरूआत की गई। पति की मृत्यु के साथ उसकी चिता पर पत्नी को जिन्दा जलाने की प्रथा को सती प्रथा कहते थे।

राजा राममोहन राय बचपन से ही इस प्रथा के घोर विरोधी थे। इन्होंने अपने भाभी को सती होते देखा था। तभी इनके द्वारा यह प्रतिज्ञा की गयी थी कि इस प्रथा का वे उन्मूलन करेंगे। सन् 1818 ई० में इनके द्वारा सती प्रथा के विरोध में आन्दोलन प्रारम्भ किया गया। समाचार पत्र पत्रिका आदि के द्वारा इसका प्रचार किया गया। लोगों को उन्होंने यह भी बताया कि इस प्रथा का कोई शास्त्रीय अथवा पौराणिक प्रमाण नहीं है। वे उदाहरण भी देते है कि मनुस्मृति के अनुसार भी विधवा को सन्यासी का जीवन व्यतीत करना चाहिए।

अपने तर्को के आधार पर इन्होंने सती प्रथा को हत्या के रूप में एक जघन्य अपराध घोषित किया। इनके अथक प्रयास द्वारा लॉर्ड विलियम बैन्टिक ने सन् 1829 ई0 में इस प्रथा को The Bengal Sati Regulation Act-1829 द्वारा गैर कानूनी घोषित कर दिया। इससे मातृशक्ति का व्यापक समर्थन राजा राममोहन राय के साथ हो गया। राजा राममोहन राय द्वारा सती प्रथा का उन्मूलन करके महिला सुधार की दिशा में ऐतिहासिक प्रयास किया गया। वे आधी आबादी जो अधिकारों से वंचित स्त्री समाज को पुनः वह

अधिकार वापस मिलने में आसानी हुई। यह उनके द्वारा किया गया आधी आबादी अथवा महिला सुधार की दिशा में ऐतिहासिक पहल थी जिसका व्यापक असर भारतीय जनमानस पर पड़ा।

राजा राममोहन राय की जीवनी लेखिका सोफिया क्लेट ने लिखा है कि "यह राममोहन राय का विशेष गौरव था कि उन्होंने इस विषम परिस्थिति में ब्रिटिश सरकार की सहायता की। उन्होंने हिन्दू धर्म ग्रन्थों को अपने गम्भीर ज्ञान के आधार से यह प्रमाणित किया कि सती प्रथा धर्म संगत नहीं है। इतना ही नहीं उन्होंने यह भी दिखाया कि स्वार्थ के कारण इस प्रथा को शुरू किया गया। जिसमे सबसे बड़ा स्वार्थ यह था कि विधवाओं के भरण–पोषण से किस प्रकार निजात पायी जाये।" उस समय विधवा पुनर्विवाह का कोई कानून नहीं था। विधवा स्त्रियों की स्थिति समाज में अत्यन्त दयनीय हो गई थी। सामाजिक तिरस्कार के भय से वे सती होना उचित समझाती थी। इसे लेकर राजा राममोहन राय ने समाज को तर्क के साथ विधवा पुनर्विवाह को उचित बताया। तमाम नैतिक व धार्मिक साक्ष्य प्रस्तुत किए जिसका समर्थन ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, शशिधर बनर्जी आदि समाज सुधारकों द्वारा किया गया। ईश्वरचन्द्र जी ने स्वयं एक विधवा से विवाह कर मिशाल पेश की जिससे लोगों में असर हुआ, विधवा पुनर्विवाह को बढ़ावा मिला, वेश्यावृत्ति में कमी देखी गई, बाल विवाह आदि में काफी कमी देखने को मिली।

तत्कालीन समय में बाल विवाह भी एक व्यापक सामाजिक कुप्रथा थी। यद्यपि राजा राममोहन राय स्वयं बहुविवाह एवं बाल विवाह से ग्रस्त थे क्योंकि इनका पहला विवाह 9 वर्ष की आयु में ही हो गया था। इनकी पहली पत्नी की मृत्यु के पश्चात एक वर्ष के भीतर ही दूसरा विवाह हो गया। उसके बाद इनका एक विवाह और हुआ।

बाल विवाह का सबसे बड़ा नुकसान यह था कि पुरुषो पर पारिवारिक बोझ जल्दी पड़ जाता था। जिससे वह स्वयं के व्यक्तित्व का विकास नहीं कर पाते थे और लड़की भी कम उम्र में ही माँ बन जाती थी। जिससे कि परिपक्वता के अभाव में उनकी मृत्यु की प्रतिशतता अधिक हो जाती थी। जो कि राष्ट्र के लिए भारी क्षति का विषय था।

राजा राममोहन राय एवं ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के प्रयास से 1860 ई0 में एक अधिनियम पारित हुआ जिसके अनुसार लड़की की विवाह की आयु 10 वर्ष कर दी गयी। 1930 ई0 में शारदा एक्ट आया जिसमें लड़की की विवाह की आयु 18 वर्ष निश्चित की गयी।

निष्कर्ष – इस प्रकार भारतीय समाज में व्याप्त कुरीति, पाखण्ड, अंधविश्वास आदि के विरूद्ध राजा राममोहन राय ने दृढ़ संकल्प के साथ अपने विचारों को भारतीय जनमानस में पहुंचाने का कार्य किया। भारतीय नवजागरण के जनक के रुप मे राजा राममोहन राय ने प्राचीनता एव आधुनिकता के बीच एक सेतु के रुप में कार्य किया। सभी मनुष्यों के प्रति आत्मीयता का भाव श्रीमती इन्दिरा गाँधी का यह अनुमोदन स्वागत योग्य है कि "मौलिक और मानवीय चिन्तन करने की आदत हम डालें ताकि बुद्धि व करूणा का समन्वय हो सके जिसके राजाराम मोहन राय उदाहरण थे।"

रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार, "अपने समय में राममोहन ही ऐसे व्यक्ति थे.. जिन्होंने आधुनिक युग के महत्व को समझा। (Rammohan was the only person in his time …. to realize completely the significance of the modern age.) वह जानते थे कि मानव सभ्यता का आदर्श स्वतन्त्रता के पृथकीकरण में नहीं है अपितु मनुष्यों तथा राष्ट्रों के अन्तरनिर्भरता के भ्रातृत्व में हैं। उनका यह प्रयत्न था कि हम अपने सांस्कृतिक व्यक्तित्व को पूर्णरूपेण समझें और इस सभ्यता के अनूठेपन के अस्तित्व को जानें, और साथ–साथ यह प्रयत्न भी करें कि हम अन्य सभ्यताओं की ओर सहानुभूतिपूर्ण सहकारिता की भावना से बढ़ें।"

महत्वपूर्ण शब्द

1. आध्यात्मिकता – भौतिकता से परे अनुभव।
2. परम्परावादी – परम्परा का अनुयायी।
3. पृथकत्व – अलग करना।
4. नवोत्थान – नवजागरण।
5. धर्म निरपेक्ष – स्वतंत्र धर्म।
6. पाखण्डवाद – दिखावा करना।
7. जूरी व्यवस्था – न्यायिक व्यवस्था।
8. सती प्रथा – सह–मरण।
9. अन्तर्जातीय विवाह – भिन्न वर्ण जाति में विवाह।
10. पुर्नजागरण – पुनः जागरण।
11. मानवतावाद – सभी मनुष्यों के प्रति प्रेम।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. तारा चन्द्रः भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास (द्वितीय खण्ड)
2. कोठारी रजनीः भारत में राजनीति
3. अहूजा रामशरण : भारतीय सामाजिक व्यवस्था
4. क्रोफोल्ड एस०सी० : राजाराम मोहन राय
5. विपिन चन्द्र पाल : आधुनिक भारत का इतिहास
6. वी०एन० राव : आधुनिक भारतीय चिन्तन
7. जवाहर लाल नेहरू भारत एक खोज
8. बी0एन0लूनियाः भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास, पृष्ठ सं0–361–370, 374–376
9. https://www-thebrahmosamaj-net/indeÛ-html
10. बी0एल0 ग्रोवरः आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0–327
11. डा0 आर0पी0 पाण्डेयः आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारक, पृ0सं0–31–36

*****